२ अप्रैल २००७, कुल पृष्ठ : ८, मूल्य : २/- आर. एन. आई. ३११०९/७७ RJ / J. P. C / FN-064 / 2006-08

जैन
पथप्रदर्शक

ए-४, बापूनगर, जयपुर - ३०२०१५ (राज.)

नैतिक एवं सामाजिक चेतना का अग्रदूत निष्पक्ष पाक्षिक

भगवान महावीर के २६०७ वें जन्मोत्सव के उपलक्ष्य में सभी पाठकों, लेखकों व साधर्मियों को हार्दिक बधाई !

वर्ष : ३०, अंक : १ सम्पादक : **पण्डित रतनचन्द भारिल्ल** आजीवन शुल्क : २५१ रुपये

अप्रैल (प्रथम), २००७ प्रबन्ध सम्पादक : **पं. संजीवकुमार गोधा व पं. जितेन्द्र वि. राठी** वार्षिक शुल्क : २५ रुपये

अष्टाह्निका महापर्व सानन्द सम्पन्न

१.खड़ैरी (दमोह-म.प्र.) : यहाँ श्री अखिल भारतीय जैन युवा फैडरेशन एवं महिला फैडरेशन के तत्त्वावधान में अष्टाह्निका पर्व के अवसर पर ६४ ऋद्धि विधान का आयोजन हुआ।

प्रतिदिन प्रात: पूजन-विधान के पश्चात् दोपहर में पण्डित नरोत्तमदासजी शास्त्री के विधान की जयमाला एवं रात्रि में पण्डित ताराचन्दजी जैन के समयसार पर सारगर्भित प्रवचन हुए।

प्रवचनोपरान्त रात्रि में सांस्कृतिक कार्यक्रमों का आयोजन स्थानीय विद्वान पण्डित भानुजी शास्त्री, पण्डित चेतनजी शास्त्री एवं श्री दिनेशजी जैन ने सम्पन्न कराये।

सम्पूर्ण कार्यक्रम में जैन युवा शास्त्री परिषद के सदस्यों का सहयोग रहा। **– चैतन्य शास्त्री**

२. दिल्ली : यहाँ **सैनिक फार्म** स्थित श्री दि.जैन मंदिर में श्री सिद्धचक्र विधान का आयोजन हुआ। इस प्रसंग पर पण्डित राकेशजी शास्त्री दिल्ली के विधान की जयमाला पर प्रवचन हुये।

दिल्ली के ही अन्य उपनगर **लारेंस रोड** स्थित श्री पार्श्वनाथ दिगम्बर जैन मन्दिर केशवपुरम् में श्री सिद्धचक्र महामण्डल विधान सम्पन्न हुआ।

विधान के सम्पूर्ण कार्य विधानाचार्य पण्डित अमितजी शास्त्री फुटेरा एवं पण्डित अमितजी शास्त्री लुकवासा के निर्देशन में सम्पन्न हुये।

शिवाजी पार्क स्थित जैन मन्दिर में पण्डित धनसिंहजी जैन पिड़ावा के निर्देशन में श्री सिद्धचक्र विधान आयोजित हुआ। इस अवसर पर पण्डित धनसिंहजी के प्रवचनों का लाभ मिला।

३. मंगलायतन (अलीगढ़) : यहाँ पर्व के अवसर पर गुरुदेवश्री के सी.डी. प्रवचनों के अतिरिक्त डॉ. मानमलजी जैन कोटा के नियमसार के शुद्धभाव अधिकार पर सारगर्भित प्रवचन हुये।

आपके अतिरिक्त पण्डित राकेशजी शास्त्री द्वारा तत्त्वार्थसूत्र पर शिक्षण कक्षा एवं पण्डित देवेन्द्रजी जैन द्वारा सैंतालीस शक्तियों तथा समयसार गाथा ३२० पर प्रवचन हुये।

जैन पत्र सम्पादक सम्मेलन सम्पन्न

श्री महावीरजी (राज.) : यहाँ दिनांक १ मार्च ०७ को प्रात: ७ बजे समन्वय वाणी जिनागम शोध संस्थान, जयपुर द्वारा आयोजित जैन पत्र सम्पादक सम्मेलन डॉ. रमेश जैन (नेत्र विशेषज्ञ) निवाई की अध्यक्षता में सम्पन्न हुआ। समारोह के मुख्य अतिथि श्री अनूपचन्द एडवोकेट फिरोजाबाद तथा विशिष्ट अतिथि इन्दिरा प्रियदर्शनी अवार्ड से सम्मानित युवा उद्यमी श्री शुद्धात्मप्रकाश भारिल्ल जयपुर थे।

समारोह का शुभारंभ प्रसिद्ध समाजसेवी श्री रमेश तिजारिया जयपुर द्वारा द्वीप प्रज्जलन व डॉ. महेन्द्र जैन 'मनुज' इन्दौर के मंगलाचरण से हुआ। वक्ताओं में सिद्धान्तसूरि पण्डित रतनचन्द भारिल्ल, वरिष्ठ पत्रकार श्री मिलापचन्द डण्डिया, श्री प्रवीणचन्द छाबड़ा, डॉ. संजीव भानावत, डॉ. भागचन्द 'भागेन्दु' एवं डॉ. चिरंजीलाल बगड़ा थे। सभा का संचालन समन्वय वाणी के सम्पादक श्री अखिल बंसल ने किया। **(शेष पृष्ठ ८ पर..)**

ग्रीष्मावकाश का सदुपयोग कैसे करें ?

यदि आप अपने बालकों के ग्रीष्मावकाश का सदुपयोग करना चाहते हैं, उन्हें धार्मिक ज्ञान के साथ-साथ नैतिक आचार-व्यवहार का ज्ञान दिलाना चाहते हैं, तो **देवलाली (नासिक-महा.) में दिनांक ८ से २५ मई, २००७ तक** में आयोजित होनेवाले शिक्षण-प्रशिक्षण शिविर में अवश्य भेजें।

इस शिविर में प्रतिदिन युवा व किशोर वर्ग हेतु जैन दर्शन की विश्व व्यवस्था व वैज्ञानिकता तथा जैनदर्शन की जीवन में उपयोगिया विषय पर कक्षा का आयोजन किया जायेगा।

साथ ही बाल वर्ग हेतु तीनों समय विभिन्न बाल विषयों पर भी कक्षाओं का आयोजन किया जायेगा। उनके व्यक्तित्व विकास आदि की कक्षाएँ भी आयोजित की जायेंगी।

बालकों के मनोरंजन हेतु रात्रि में धार्मिक कविताएँ, नाटक, चित्रकला, प्रश्नमंच आदि सांस्कृतिक कार्यक्रम भी आयोजित होंगे, जिसमें सभी विद्यार्थियों को भाग लेने का मौका मिलेगा।

सभी कक्षाएँ बाल मनोविज्ञान की विशेषज्ञा **डॉ. शुद्धात्मप्रभा टडैया, मुम्बई** के निर्देशन में विभिन्न अध्यापकों द्वारा संचालित की जायेगी।

ज्ञातव्य है कि बालकों के लिये जैन के.जी. व जैन जी. के. (भाग 4) की सफलता के पश्चात् अब डॉ. शुद्धात्मप्रभा टडैया द्वारा लिखित जैन जी.के. भाग-5 एवं 6, जैन कलर बुक तथा 'मुझमें भी एक दशानन रहता है' नामक कृतियों का शीघ्र प्रकाशन हो रहा है। **– प्रबन्ध सम्पादक**

सम्पादकीय –

समाधि और सल्लेखना

१

– रतनचन्द भारिल्ल

अध्यात्मरत्नाकर, सिद्धहस्त लेखक एवं प्रसिद्ध जैन उपान्यासकार पण्डित रतनचन्दजी भारिल्ल की अनेक पुस्तकें लाखों की संख्या में घर-घर पहुँच चुकी हैं। उपान्यास विधा को वर्तमान समय में नया आयाम देनेवाले लेखक की कृतियों से जैन-अजैन समाज की वर्तमान युवा पीढ़ी के साथ अन्य साधर्मी भी लाभान्वित होते रहे हैं। जैनपथ प्रदर्शक के सम्पादकीय के रूप में अब तक आपने ***'ये तो सोचा ही नहीं'*** *नामक कृति का आद्योपान्त रसास्वादन किया होगा।*

अब, मनुष्य भव प्राप्त करने के पश्चात् जीवन में व्यक्ति को करनेयोग्य क्या कार्य है ? इसी बात को लक्ष्य में लेकर लेखक द्वारा एक और नवीन पुस्तक का प्रारंभ किया गया है। 'समाधि और सल्लेखना' के नाम से लिखी जा रही इस नवीन पुस्तक का उद्देश्य क्या है ? उसे स्वयं लेखक द्वारा लिखित ***आत्मकथ्य*** *से हम समझ सकते हैं; जो निम्नानुसार है ह्न*

प्रबन्ध सम्पादक

समाधि है जीवन जीने की कला

क्रोधादि मानसिक विकारों का नाम है 'आधि',
शारीरिक रोग का दूसरा नाम है 'व्याधि'।
पर में कर्तृत्व बुद्धि का बोझ है 'उपाधि',
उपर्युक्त तीनों विकृतियों से रहित-
शुद्धात्मस्वरूप में स्थिरता का नाम है 'समाधि'।।

समाधि की समझ से होती है आत्मा की प्रसिद्धि,
समाधि की साधना से होती है सद्गुणों में अभिवृद्धि।
और बढ़ती है आत्म शक्तियों की समृद्धि,
जो पुनः पुनः पढ़ेगा इसे उसके आत्मा में होगी विशुद्धि-
और होगी सुख-शान्ति तथा गुणों में गुणात्मक वृद्धि।।

'सल्लेखना' है मृत्यु महोत्सव का जलजला,
इससे होता है आत्मा का भला।
बन्धु ! इसे न समझो बला, अन्यथा यों हीह्न
चलता रहेगा संसरण का सिलसिला।।
अब तक संयोगों के राग में यों ही गया छला,
मैं अकेला ही आया था और अब अकेला ही चला।
समाधि है जीवन जीने की कला,
इसी से पहुँचते हैं सिद्ध शिला।।

संन्यास और समाधि है जीना सिखाने की कला।
बोधि-समाधि साधना शिवपंथ पाने की कला।।
सल्लेखना कमजोर करती काय और कषाय को।
निर्भीक और निःशंक कर उत्सव बनाती मृत्यु को।।

मरण और समाधिमरण ह्न दोनों मानव के अन्तकाल (परलोक गमन) की बिल्कुल भिन्न-भिन्न स्थितियाँ हैं। यदि एक पूर्व है तो दूसरी पश्चिम, एक अनन्त दुःखमय और दुःखद है तो दूसरी असीम सुखमय व सुखद। मरण की दुःखद स्थिति से सारा जगत सु-परिचित तो है ही, भुक्त-भोगी भी है। पर समाधिमरण की सुखानुभूति का सौभाग्य विरलों को ही मिलता है, मिल पाता है।

आत्मा की अमरता से अनभिज्ञ अज्ञजनों की दृष्टि में 'मरण' सर्वाधिक दुःखद, अप्रिय, अनिष्ट व अशुभ प्रसंग के रूप में ही मान्य रहा है। उनके लिए 'मरण' एक ऐसी अनहोनी अघट घटना है, जिसकी कल्पना मात्र से अज्ञानियों का कलेजा काँपने लगता है, कण्ठ अवरुद्ध हो जाता है, हाथ-पाँव फूलने लगते हैं। उन्हें ऐसा लगने लगता है मानो उन पर कोई ऐसा अप्रत्याशित-अकस्मात् अनभ्र वज्रपात होनेवाला है जो उनका सर्वनाश कर देगा, उन्हें नेस्त-नाबूत कर देगा, उनका अस्तित्व ही समाप्त कर देगा। समस्त सम्बन्ध और इष्ट संयोग अनन्तकाल के लिए वियोग में बदल जायेंगे। ऐसी स्थिति में उनका 'मरण' 'समाधिमरण' में परिणत कैसे हो सकता है? नहीं हो सकता।

जब चारित्रमोहवश या अन्तर्मुखी पुरुषार्थ की कमजोरी के कारण आत्मा की अमरता से सुपरिचित-सम्यग्दृष्टि-विज्ञजन भी 'मरणभय' से पूर्णतया अप्रभावित नहीं रह पाते, उन्हें भी समय-समय पर इष्ट वियोग के विकल्प सताये बिना नहीं रहते। ऐसी स्थिति में देह-जीव को एक मानने वाले मोही-बहिरात्माओं की तो बात ही क्या है? उनका प्रभावित होना व भयभीत होना तो स्वाभाविक ही है।

मरणकाल में चारित्रमोह के कारण यद्यपि ज्ञानी के तथा अज्ञानी के बाह्य व्यवहार में अधिकांश कोई खास अन्तर दिखाई नहीं देता, दोनों को एक जैसा रोते-बिलखते, दुःखी होते भी देखा जा सकता है; फिर भी आत्मज्ञानी-सम्यग्दृष्टि व अज्ञानी-मिथ्यादृष्टि के मृत्युभय में जमीन-आसमान का अन्तर होता है; क्योंकि दोनों की श्रद्धा में भी जमीन-आसमान जैसा ही महान अन्तर आ जाता है।

स्व-पर के भेदज्ञान से शून्य अज्ञानी मरणकाल में अत्यन्त संक्लेशमय परिणामों से प्राण छोड़ने के कारण नरकादि गतियों में जाकर असीम दुःख भोगता है; वहीं ज्ञानी मरणकाल में वस्तुस्वरूप के चिन्तन से साम्यभावपूर्वक देह विसर्जित करके 'मरण' को 'समाधिमरण' में अथवा मृत्यु को महोत्सव में परिणत कर स्वर्गादि उत्तमगति को प्राप्त करता है।

यदि दूरदृष्टि से विचार किया जाय तो मृत्यु जैसा मित्र अन्य कोई नहीं है, जो जीवों को जीर्ण-शीर्ण-जर्जर तनरूप कारागृह से निकाल कर दिव्य देह रूप देवालय में पहुँचा देता है। कहा भी है ह्न

मृत्युराज उपकारी जिय कौ, तन सों तोहि छुड़ावै।
नातर या तन बन्दीगृह में, पड़ौ-पड़ौ विलसावै ।।

कल्पना करें, यदि मृत्यु न होती तो विश्व व्यवस्था कैसी होती?

अरे ! सम्यग्दृष्टि की दृष्टि में तो मृत्यु कोई गंभीर समस्या ही नहीं है; क्योंकि उसे मृत्यु में अपना सर्वस्व नष्ट होना प्रतीत नहीं होता। तत्त्वज्ञानी अच्छी तरह जानता है कि मृत्यु केवल पुराना झोंपड़ा छोड़कर नये भवन में निवास करने के समान स्थानान्तर मात्र हैं, पुराना मैला-कुचैला वस्त्र उतारकर नया वस्त्र धारण करने के समान है; परन्तु जिसने आत्मा को नहीं जाना, स्वयं की अनन्त शक्तियों और वस्तु स्वातंत्र्य के सिद्धान्त को न मानकर, धर्म को न पहचान कर जीवन भर पापाचरण ही किया हो, आर्त-रौद्रध्यान किया हो, नरक-निगोद जाने की तैयारी की हो, उसका तो रहा-सहा पुण्य भी अब क्षीण हो रहा है, उस अज्ञानी और अभागे का दुःख कौन दूर कर सकता है? अब उसके मरण सुधरने का भी अवसर समाप्त हो गया है; क्योंकि उसकी गति अनुसार मति को बिगड़ना ही है।

सम्यग्दृष्टि को देह में आत्मबुद्धि नहीं रहती। वह देह की नश्वरता, क्षणभंगुरता से भली-भाँति परिचित रहता है। वह जानता है कि ह्न

नौ दरवाजे का पींजरा, तामें सुआ समाय।
उड़वे कौ अचरज नहीं, अचरज रहवे माँहि ।।

अतः उसे मुख्यतया तो मृत्युभय नहीं होता; किन्तु कदाचित् यह भी संभव है कि सम्यग्दृष्टि भी मिथ्यादृष्टियों की तरह आँसू बहाये। पुराणों में भी ऐसे उदाहरण उपलब्ध हैं ह्न रामचन्द्रजी क्षायिक सम्यदृष्टि थे, तद्भव मोक्षगामी थे; फिर भी छह महीने तक लक्ष्मण के शव को कंधे पर ढोते फिरे।

कविवर बनारसीदास की मरणासन्न विपन्न दशा देखकर लोगों ने यहाँ तक कहना प्रारंभ कर दिया था कि ह्न ''पता नहीं इनके प्राण किस मोह-माया में अटके हैं? लोगों की इस टीका-टिप्पणी को सुनकर उन्होंने स्लेट पट्टी माँगी और उस पर लिखा ह्न

ज्ञानकुतक्का[1] हाथ, मारि अरि मोहना।
प्रगट्यो रूप स्वरूप अनंत सु सोहना।।
जा परजै को अंत सत्यकरि जानना।
चले बनारसी दास फेरि नहिं आवना।।

अतः मृत्यु के समय ज्ञानी की आँखों में आँसू देखकर ही उसे अज्ञानी नहीं मान लेना चाहिए, क्योंकि वह अभी श्रद्धा के स्तर तक ही मृत्युभय से मुक्त हो पाया है; चारित्रमोह जनित कमजोरी तो अभी है ही न? फिर भी वह विचार करता है कि ह्न ''स्वतंत्रतया स्व-संचालित अनादिकालीन वस्तु व्यवस्था के अन्तर्गत 'मरण' एक सत्य तथ्य है, जिसे न तो नकारा ही जा सकता है, न टाला ही जा सकता है और न आगे-पीछे ही किया जा सकता है। सर्वज्ञ के ज्ञान और कर्म सिद्धान्त के अनुसार भी जीवों का जीवन-मरण व सुख-दुःख अपने-अपने स्वकाल में कर्मानुसार ही होता है ह्न ऐसा मानने में अकाल मृत्यु में कोई बाधा नहीं आती, क्योंकि वह तो निमित्त सापेक्ष कथन है। वस्तुतः अकाल मृत्यु भी अपने स्वकाल में ही होती हैं; क्योंकि प्रत्येक कार्य के सम्पन्न होने में पाँच समवाय (कारण) होते ही हैं। उन पाँच कारणों में एक कार्यमात्र स्व-काल भी एक कारण है।

यद्यपि ज्ञानी व अज्ञानी अपने-अपने विकल्पानुसार इन मरण जैसी प्रतिकूल परिस्थितियों को टालने के अन्त तक भरसक प्रयास करते हैं; तथापि उनके वे प्रयास सफल नहीं होते, हो भी नहीं सकते। अंततः इस मृत्यु के पर्यायगत सत्य से तो सबको गुजरना ही पड़ता है। जो विज्ञजन तत्त्वज्ञान के बल पर इस मृत्यु के सत्य को स्वीकार कर लेते हैं, उनका मरण समाधिमरण के रूप में बदल जाता है और जो अज्ञजन उक्त पर्यायगत मरण सत्य को स्वीकार नहीं करते, उसे टालने के अन्तिम क्षण तक प्रयत्न करते रहते हैं, वे अत्यन्त संक्लेशमय परिणामों से मरकर नरकादि गतियों को प्राप्त करते हैं।

इसप्रकार हम देखते हैं कि ह्न ज्ञानीजन स्वतंत्र-स्वचालित वस्तुस्वरूप के इस प्राकृतिक तथ्य से भलीभाँति परिचित होने से श्रद्धा के स्तर तक मृत्युभय से भयभीत नहीं होते और अपना अमूल्य समय व्यर्थ चिन्ताओं में व आकुलता में बर्बाद नहीं करते; किन्तु इस तथ्य से सर्वथा अपरिचित अज्ञानीजन अनादिकाल से हो रहे जन्म-मरण एवं लोक-परलोक के अनन्त व असीम दुःखों से बे-खबर होकर जन्म-मरण के हेतुभूत छोटी-छोटी समस्याओं को तूल देकर अपने अमूल्य समय व शक्ति को बर्बाद करते हैं, यह भी एक विचारणीय बिन्दु है।

ऐसे लोग न केवल समय व शक्ति बर्बाद करते हैं, बल्कि इष्टवियोगज आर्त-ध्यान करके प्रचुर पाप भी बाँधते रहते हैं। यह उनकी सबसे बड़ी मानवीय कमजोरी है। **(क्रमशः)**

१. ज्ञानरूपी फरसा (हथियार)

पुस्तक समीक्षा

पुस्तक का नाम – यदि चूक गये तो !
पृष्ठ – १६८, मूल्य – बारह रुपये मात्र
प्रकाशक – पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट, जयपुर।

प्रस्तुत कृति लोकप्रिय लेखक सिद्धान्तसूरि पण्डित रतनचन्दजी भारिल्ल के 'शलाका पुरुष (भाग १-२) एवं हरिवंश कथा' की मार्मिक सूक्तियों का तथा लोक व्यवहार में समागत नीति-वाक्यों का भवतापहारी श्रेष्ठ संकलन है, जिसे श्रीमती शांतिदेवी जैन, जयपुर ने संकलित किया है।

दैनिक जीवन एवं सामान्य लोक व्यवहार को प्रस्तुत करते हुए उपन्यास विधा को एक नवीन अध्यात्म पुट देने के पश्चात् प्रस्तुत कृति में संकलित नीतिवाक्य है। जैसे ह्न **१.** जिस तरह सैकड़ों नदियाँ भी समुद्र को सन्तुष्ट नहीं कर पाती, उसी तरह सांसारिक सुख के साधन जीवों का दुःख दूर नहीं कर पाते हैं। २. दूसरे को दुःख पहुँचाकर कोई सुखी नहीं रह सकता इत्यादि सूक्तियाँ जीवन में अचूक रामबाण औषधि का कार्य करती हैं। जिन्हें पढ़कर पाठक एक धारा में बँधते हुए अपने रोजाना के विचारों से मुक्त होकर सरलता महसूस करता है। आकुलता-व्याकुलता से त्रस्त संसारी जीवों को यथा नाम तथा गुण को चरितार्थ करने वाली यह कृति अवश्य ही पठनीय है।

बालचंद इंस्टीटयूट का विज्ञापन

समाधिमरण का स्वरूप

ह्व श्रीमती गुणमाला भारिल्ल

जैनधर्म में बारह व्रत बताये गये हैं। पाँच अणुव्रत, चार शिक्षाव्रत, तीन गुणव्रत ह्व ये श्रावक के व्रत हैं। इन्हें अतिचार रहित पालन करता हुआ व्रती श्रावक सल्लेखना को धारण करता है अथवा यों कहिये कि सम्यक्त्वसहित पाँच अणुव्रतों की धारणा करके, सात शीलव्रतों को पालन करके अन्त में वह सल्लेखना अंगीकार करता है।

पुरुषार्थसिद्ध्युपाय में सल्लेखना धारण करने की बात इसप्रकार प्रस्तुत की गयी है ह्व

मरणान्तेऽवश्यमहं विधिना, सल्लेखनां करिष्यामि।
इति भावनापरिणतोऽनागतमपि पालयेदिदं शीलम्।।176।।

मैं मरण के समय अवश्य शास्त्रोक्त विधि से समाधिमरण करूँगा। इसप्रकार भावनारूप परिणति करके मरणकाल आने से पहिले ही यह सल्लेखना व्रत पालना अर्थात् अंगीकार करना चाहिये।

सत् = सम्यक्प्रकार से, लेखना = कषाय को क्षीण-कृश करने को सल्लेखना कहते हैं। उसके अभ्यन्तर और बाह्य दो भेद हैं। काय को कृश करने को बाह्य और अन्तरङ्ग क्रोधादि कषायों के कृश करने को अभ्यन्तर सल्लेखना कहते हैं।

आचार्य अमृतचन्द्रजी ने इसी पुरुषार्थसिद्ध्युपाय में कहा है कि सल्लेखना आत्मघात नहीं है; जो इसप्रकार है ह्व

मरणेऽवश्यं भाविनि कषायसल्लेखनातनूकरणमात्रे।
रागादिमन्तरेण व्याप्रियमाणस्य नात्मघातोऽस्ति।।177।।

जब मरण अवश्यम्भावी है, तब कषाय का त्याग करते हुए राग-द्वेष बिना ही प्राण त्याग करने वाला जो व्यक्ति है, उसको आत्मघात नहीं हो सकता है। फिर आचार्यदेव खुद ही प्रश्न करते हैं कि वह आत्मघाती कौन है ? यह बताते हैं ह्व

यो हि कषायाविष्टः कुम्भकजलधूमकेतुविषशस्त्रैः।
व्यपरोपयति प्राणान् तस्य स्यात्सत्यमात्मवधः।।178।।

जो जीव क्रोधादि कषायों के वश होकर श्वासनिरोध करके अथवा फाँसी लगाकर जल में डूबकर अग्नि में जलकर, विष का भक्षण कर या शस्त्रों के द्वारा अपने प्राणों का घात करता है, उस जीव को हमेशा आत्मघात का दोष लगता है।

आचार्य समन्तभद्र ने रत्नकरण्डश्रावकाचार में कहा है ह्व

उपसर्गे दुर्भिक्षे जरसि रुजायां च निःप्रतिकारे।
धर्माय तनुविमोचनमाहुः सल्लेखनामार्याः।।122।।

जिसका प्रतिकार संभव न हो ह्व ऐसा उपसर्ग होने पर, दुर्भिक्ष आ जाने पर, वृद्धावस्था आ जाने पर, असाध्य रोग हो जाने पर; धर्म की रक्षा के लिये जो शरीर का त्याग किया जाता है, उसे आचार्यदेव सल्लेखना कहते हैं।

समाधिमरण की महिमा में रत्नकरण्डश्रावकाचार में लिखा हैं ह्व

अंतः क्रियाधिकरणं तपः फलं सकलदर्शिनः स्तुवते।
तस्माद्यावद्विभवं समाधिमरणे प्रयतितव्यम्।।123।।

अतः संन्यासमरण है आधार जिसका, उस तप की स्तुति सर्वज्ञ भगवान भी करते हैं। इसलिये शक्ति के अनुसार समाधिमरण लिए अधिकाधिक प्रयत्न करना चाहिये।

आचार्य देव तो समाधिमरण को कितने ही विश्लेषणों से उद्धृत करते हैं। जैसे ह्व मेरा आत्मा ज्ञान स्वरूप है, अविनाशी है, अखण्ड है, मेरा निजरूप है, जिनस्वभाव का विनाश नहीं होता है। जिसका संयोग हुआ है उसका वियोग अवश्य होगा।

मैंने दर्शन, ज्ञान, चारित्र की विपरीतता से विषयों के आधीन होकर विपरीत श्रद्धान, विपरीत ज्ञान, विपरीत आचरण करके चारों गतियों में परिभ्रमण किया है। अनादिकाल से मिथ्यात्व सहित अनन्तानन्त बार बाल मरण किये। यदि एक बार भी पण्डितमरण करता तो फिर मरण का पात्र ही नहीं होता।

आचार्य कहते हैं कि समाधिमरण के इच्छुक को क्या करना चाहिये ?

वीतरागी निर्दोष गुरुओं का संयोग प्राप्त कर, अपने रागादि कषायों को घटाकर, परिषह आदि सहने में, शरीर व मन को समर्थ हो, धैर्यादि गुणों का धारक हो, निर्ग्रंथ वीतरागी गुरु निर्वाह करने को समर्थ हो, देशकाल भी सहायता का शुद्ध संयोग हो तो महाव्रत अंगीकार करें।

ऐसे पुरुष अपने में विचार करते हैं कि देह के ममत्व के कारण ही अनन्त जन्म मरण किये हैं, राग, द्वेष, मोह, काम क्रोध, आदि की उत्पत्ति के कारण संसार के सभी दुःखों को भोगता है, वैसे आत्मा का संबंध तो अपने स्वभावरूप सम्यग्दर्शन, ज्ञान, चारित्र है वहीं हमारा निज स्वभाव है।

इस जीव ने मिथ्यादर्शन के प्रभाव से देह को ही आत्मा मानकर अपने ज्ञान-दर्शन स्वरूप का घात करके अनन्त परिवर्तन किये हैं। मैंने कभी सम्यक्मरण नहीं किया, यदि सम्यक्मरण किया होता तो संसार मरण नहीं करना पड़ता।

हे आत्मन्! तुम्हारा रूप तो ज्ञान है, जिसमें सकल पदार्थ प्रकाशित हो रहे हैं, वह अमूर्तिक ज्ञानज्योति स्वरूप, अखण्ड अविनाशी, ज्ञाता-दृष्टा है।

यदि ज्ञान सहित, देह से ममता छोड़कर, सावधानीपूर्वक, धर्मध्यान सहित, संक्लेश रहित, वीतरागता पूर्वक मैं समाधिमरण नामक राजा की सहायता लूँ तो मेरा आत्मा देह धारण नहीं करेगा, दुःखों को नहीं भोगेगा, समाधिमरण नाम का राजा बड़ा न्यायमार्गी है। मुझे इसी की शरण जाना चाहिये। मेरा कुमरण नहीं हो।

आचार्य समन्तभद्र ने तो अनेक विशेषणों से समाधिमरण को उद्धृत किया है। जैसे ह्व वह सुख देनेवाला मित्र है, वह कल्पवृक्ष है, उत्तम दातार है, वह ज्ञानी भव रहित है

आनन्द देने वाला है, आत्मा को परलोक जाने से कोई नहीं रोक सकता है। वह निर्वाण को देने वाला है, असत् को देनेवाला है, महान तप है, मुक्ति का सरल उपाय है, उत्तम गति को देनेवाला है।

पुरुषार्थसिद्ध्युपाय में आचार्य अमृतचन्द्राचार्य देव तो कहते हैं कि सल्लेखना भी अहिंसा है।

नीयन्तेऽत्र कषाया हिंसाया हेतवो यतस्तनुताम्।
सल्लेखनामपि ततः प्राहुरहिंसाप्रसिद्ध्यर्थम्।।179।।

हिंसा का मूलकारण कषाय है, वह सल्लेखना से क्षीण होती हैं। कषायें घट जाती हैं। अतः आचार्यों ने संन्यास (सल्लेखना) का कथन अन्त में अहिंसा व्रत की सिद्धि के लिये किया है। ●

तत्त्वचर्चा

छहढाला का सार ४

- डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल

(गतांक से आगे)

देखो ! पागल कुत्ता काटे तो बहुत जोर की प्यास लगती है; लेकिन यदि एक घूँट पानी पिला दो तो उसकी तकलीफ सौ गुना बढ़ जाती है। उसे जो प्यास लगी, उसका इलाज क्या पानी पिलाना है ?

यदि वह चिल्लायेगा – पानी, पानी, पानी तो डॉक्टर उसे पानी देगा या दवाई ? डॉक्टर जानता है कि इसकी तकलीफ दवाई से मिटेगी, पानी से नहीं। इसीप्रकार मुनिराज जानते हैं कि यह मिथ्यादर्शन-ज्ञान-चारित्र से दुःखी है और सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र से सुखी हो सकता है। इसलिए वे उसे सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र का उपदेश देते हैं।

हमने यह मान रखा है कि कपड़े नहीं मिले, इसलिए दुःख है, रोटी नहीं मिली, इसलिए दुःख है। रोटी, कपड़ा और मकान – इन तीन चीजों की कमी से हम दुःखी हैं और इन तीन चीजों का इंतजाम हो जाये तो हम सुखी हो जायेंगे।

नेता लोग भी यही आश्वासन देते हैं कि हम रोटी, कपड़ा और मकान की व्यवस्था करेंगे; जिससे तुम सुखी हो जाओगे।

परन्तु आजतक तो कोई इनकी प्राप्ति से सुखी हुआ नहीं।

तब वह कहता है – इसका पता तो तब चलेगा, जब हमारे पास रोटी, कपड़ा और मकान हो जायेगा।

अरे भाई ! यदि इस भव में यह सब नहीं हो पाया तो यह भव मुफ्त में ही चला जायेगा।

क्या तुम सारी चीजे खुद के ही अनुभव से सीखोगे ?

क्या तुम्हारे सामने ऐसे लोग नहीं है कि जिनके पास इनकी कोई कमी नहीं है, फिर भी दुःखी हैं; क्या उनसे नहीं सीख सकते?

पैसे की कमी है – इसलिए भाई-भाई में झगड़ा होता है। यदि ऐसा है तो अंबानी बंधुओं में झगड़ा क्यों हुआ ? उनके पास तो पैसे की कमी नहीं थी। भरत-बाहुबली में भी युद्ध क्यों हुआ ? क्या उनके पास भी खाने-पीने की व्यवस्था नहीं थी ?

जो राष्ट्रपति बन गये, प्रधानमंत्री बन गये; वे तो बहुत सुखी हो गये होंगे। जेड सुरक्षा प्राप्त है उनके पोते-पोतियों को भी; क्योंकि आतंकवादी कहते हैं कि इनके पोते को उड़ा ले जायेंगे, बेटी के बेटों को उड़ा ले जायेंगे; फिर कहेंगे कि आतंकवादियों को छोड़ो, तब इन्हें छोड़ेंगे।

देखो, वे चौबीसो घण्टे भयाक्रान्त हैं। जो तुम्हें सुखी दिख रहे हैं, एक बार उन पर निगाह डालकर तो देखो कि वे कितने सुखी हैं? इससे तो ये मजदूर भले हैं, जिन्हें इसप्रकार का कोई भय तो नहीं है।

मैं यह नहीं कह रहा हूँ कि गरीब सुखी हैं। मैं तो यह कहता हूँ इस संसार में गरीब और अमीर दोनों ही दुःखी हैं। यदि तुम यह मानकर बैठे हो कि सभी के पास रोटी, कपड़ा और मकान हो जायेगा तो सारा देश सुखी हो जायेगा तो इस बात में कोई दम नहीं है; अमेरिका में तो सभी के पास रोटी, कपड़ा और मकान है, तो क्या वे सुखी हैं ?

अरे भाई ! हम कुछ न कुछ तो दूसरों को देखकर भी सीख सकते हैं। सारे संयोग हम अपने पर उतार-उतार कर देख सकते हैं क्या ? हिन्दुस्थान अमेरिका बन जायेगा तो क्या हो जायेगा ? अमेरिका को सारी दुनिया की चिंता है। अभी हमें मात्र अपने देश की ही चिंता है, फिर सारी दुनिया की हो जायेगी।

हमें एक मच्छर ने काटा, हमने फटाफट हाथ मारा और वह मर गया। उसने हमारा कितना खून पिया होगा ? एक बूँद का भी चौथाई भाग पिया होगा। उसको तुमसे कोई बैर-विरोध तो था नहीं। बेचारा क्या करे, भूखा था। उसके पास न तो दुकान है, न खेत है, न धंधा है, न कल-कारखाने हैं। क्या करता वह ? पेट तो भरना ही था। उस बेचारे ने अपना पेट भरने के लिये तुम्हारा इतना सा खून पिया और तुमने अपना खून तो पूरा ले ही लिया और उसका जीवन भी ले लिया।

अरे ! तुम एक मच्छर की बात करते हो; पर लोग तो कहते हैं कि – आजकल मच्छर बहुत हो रहे हैं, सारे घर में डी. डी. टी. छिड़का दो। एक भी मच्छर नहीं रहना चाहिए।

एक मच्छर ने तुम्हें क्या काटा, तुम मच्छरों के कुल के कुल साफ करने को तैयार हो। अंडों को भी नष्ट कर दो, जिससे उनकी नस्ल ही खत्म हो जाये। घर में डी. डी. टी. छिड़कने से क्या अकेले मच्छर ही मरेंगे, कीड़े-मकोड़े-कॉकरोच नहीं मरेंगे? जिन कीड़े-मकोड़ों से तुम्हें कोई नुकसान नहीं होता, वे भी मरेंगे।

यदि दुर्भाग्य से तुम नगर-निगम के अध्यक्ष हो गये तो पूरे नगर में डी. डी. टी. छिड़का दोगे। यदि किसी प्रदेश के मुख्यमंत्री हो गये तो पूरे राज्य में, कहीं भी एक मच्छर दिखाई नहीं देना चाहिए। और यदि महा दुर्भाग्य से प्रधानमंत्री हो गये तो सारे देश में एक भी मच्छर जिंदा नहीं रहना चाहिए। अखबारों में निकाल दो, दीवारों पर लिख दो कि जो एक मच्छर या मलेरिया का एक मरीज मुझे लाकर दिखायेगा तो मैं उसे एक हजार रुपये इनाम दूँगा।

एक प्रकार के मच्छरों को मारते ही दूसरे प्रकार के मच्छर पैदा हो जाते हैं। डेंगू जाता है तो चिकनगुनिया आ जाता है।

हम कितने बड़े हत्यारे हैं कि एक मच्छर ने हमें काटा तो हम सारी दुनिया के मच्छरों का अस्तित्व मिटा देना चाहते हैं।

अरे भाई ! अपने पैरों में धूल लगती हो तो तुम जूता पहन लो, सारी दुनिया को चमड़े से क्यों मढ़ते हो ? करनी है तो अपनी सुरक्षा करो, मच्छरदानी लगा लो; मच्छरों को क्यों मारते हो ?

यह तो आप जानते ही होंगे कि चक्रवर्ती यदि गृहस्थी में मरे, राज्य करते हुये मरे तो नियम से नरक में जाता है। कहावत भी है कि – **राजेश्वरी सो नरकेश्वरी।**

जो चीज अनन्त दुःख का कारण है, उसे हमने सुखस्वरूप मान लिया है, सुख का कारण मान लिया है।

हमारे यह पूछने पर यहाँ जैनियों के कितने घर होंगे ? लोग कहते हैं कि सौ घर होंगे। फिर बिना पूछे ही बताते हैं कि उनमें दस घर सुखी हैं। अरे भाई ! हमने यह कब पूछा था कि कितने सुखी हैं और कितने दुःखी ? हम तो मानते हैं कि सारे संसार में कोई भी सुखी नहीं है।

जो संसार विषै सुख हो तो तीर्थंकर क्यों त्यागें ?
काहे को शिवसाधन करते संयम सो अनुरागें॥

यदि संसार में सुख होता तो तीर्थंकरों के पास क्या कमी थी, चक्रवर्ती के पास क्या कमी थी ? उन्हें संसार में सुख महसूस नहीं हुआ तो मुक्ति की साधना करने के लिए एक क्षण में सबकुछ छोड़कर नग्न दिगंबर होकर चल दिये।

भाई ! बहुत बातें दूसरों के अनुभव से भी सीख लेना चाहिए। क्या तुम जहर को भी चखकर देखोगे ? दूसरों को जहर खाकर मरते देखकर यह निर्णय नहीं कर सकते कि जहर खाना मृत्यु का कारण है।

जरा समझदारी से काम लो और इस असार संसार को दुःखरूप जानकर स्वयं में समा जावो – सुखी होने का एकमात्र यही उपाय है।

पहली ढाल का सार मात्र इतना ही है कि संसार में सुख नहीं है। यह बात आपको समझ में आ गयी तो समझ लेना छहढाला की पहली ढाल समझ में आ गई।

अब दूसरी ढाल में यह बतायेंगे कि उक्त दुःखों का मूल कारण क्या है ?

दूसरा प्रवचन

तीन भुवन में सार, वीतराग-विज्ञानता।
शिवस्वरूप शिवकार, नमहूँ त्रियोग सम्हारिकै॥

कल हमने पहली ढाल की चर्चा की थी, उसमें चार गतियों के दुःखों का वर्णन है। उस सम्बन्ध में मैं आपसे एक प्रश्न करता हूँ – सबसे ज्यादा दुःख कौनसी गति में है ?

सबके मनों में इस प्रश्न का सहज भाव से एक ही उत्तर आता है और वह यह है कि नरक गति में सबसे ज्यादा दुःख है।

छहढाला की पहली ढाल में बार-बार आता है कि नरकों में इतनी भूख लगती है, इतनी प्यास लगती है कि तीन लोक का अनाज खा जाये तो भी भूख नहीं मिटे, समुद्रों पानी पी जाये तो भी प्यास नहीं मिटे। सर्दी इतनी कि लोहे का गोला छार-छार हो जाये, गर्मी इतनी कि वह गोला पिघलकर पानी हो जाये।

इससे हमें लगता है कि सबसे ज्यादा दुःख नरकगति में ही है।

लेकिन इसी छहढाला में सबसे अधिक दुःख तिर्यंच गति में बतायें हैं; क्योंकि दुःखों की बात जो आरम्भ की है, वह तिर्यंच गति से की है, निगोद से आरम्भ की है –

काल अनन्त निगोद मँझार बीत्यो एकेन्द्रिय तन धार।

तिर्यंच गति में सबसे अधिक दुःख हैं; क्योंकि उसमें निगोद शामिल है। नारकी जीवों के दुःख बाहर से अधिक दिखते हैं और तिर्यंच गति में तो लोग सिर्फ गाय, भैंस, कुत्ता, बिल्ली को ही तिर्यंच समझते हैं। निगोदिया भी तिर्यंच हैं, यह बात उनके ख्याल में ही नहीं है।

आप भगवान की पूजन में **जन्म-जरा-मृत्यु विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा** – यह सबसे पहले बोलते हैं अर्थात् जन्म, जरा और मृत्यु के दुःख नष्ट हो जाये – ऐसी प्रार्थना करते हैं। सर्दी-गर्मी नष्ट हो जाये – ऐसी प्रार्थना नहीं करते, क्योंकि जन्म-मरण का दुःख ही सबसे बड़ा दुःख है और निगोद में –

एक श्वास में अठदस बार, जन्म्यो मर्यो भर्यो दुःख भार।

निगोद में रहनेवाले जीव एक स्वांस में अठारह बार जन्मते हैं, अठारह बार मरते हैं और जन्म-मरण के दुःख के भार को ढोते रहते हैं।

छहढाला की पहली ढाल में जो क्रम दिया है, वह गतियों का नहीं, इन्द्रियों में क्रम है।

ज्यों-ज्यों ज्ञान का विकास होता है, त्यों-त्यों दुःख कम होता जाता है। यह कैसे हो सकता है कि एक इन्द्रिय को दुःख कम हो और दो इन्द्रिय को दुःख ज्यादा हो। (क्रमशः)

षष्ठम वार्षिकोत्सव सम्पन्न

सोनागिर (म.प्र.) : यहाँ श्री परमागम मंदिर का षष्ठम वार्षिकोत्सव श्री नेमीचन्दजी पहाड़िया परिवार पीसांगन के प्रमुख आयोजकत्व में दिनांक ९ से ११ फरवरी, २००७ तक हर्षोल्लासपूर्वक सम्पन्न हुआ।

प्रतिदिन प्रात: योगसार मण्डल विधान के पश्चात् प्रवचन, रात्रि में जिनेन्द्र भक्ति, प्रवचन एवं प्रश्नमंच आदि कार्यक्रम सम्पन्न हुए।

इस प्रसंग पर वाणीभूषण पण्डित ज्ञानचन्दजी विदिशा, बाल ब्र. हेमन्तभाईजी गाँधी सोनगढ़, पण्डित कमलकुमारजी पिड़ावा, पण्डित विमलचंदजी पाटनी ग्वालियर, पण्डित लालजीरामजी विदिशा, पण्डित मांगीलालजी कोलारस, पण्डित पूरनचंदजी मौ, पण्डित केशरीमलजी पाटनी ग्वालियर, श्री बसंतजी बड़जात्या ग्वालियर एवं डॉ. मुकेशजी तन्मय शास्त्री आदि का सान्निध्य प्राप्त हुआ। दिनांक १२ फरवरी को नवनिर्मित श्री कुन्दकुन्द द्वार का उद्घाटन किया गया।

डॉ. जैन शिक्षाशास्त्र विभागाध्यक्ष नियुक्त

श्री टोडरमल दिगम्बर जैन सिद्धान्त महाविद्यालय, जयपुर के स्नातक छात्र डॉ. शुद्धात्मप्रकाश जैन, जयपुर को राजस्थान विश्वविद्यालय से संबंधित वसुन्धरा महिला शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालय अचरोल (जयपुर) में शिक्षाशास्त्र विभागाध्यक्ष के रूप में नियुक्त किया गया है।

ज्ञातव्य है कि डॉ. जैन शिक्षा के क्षेत्र में पिछले पाँच वर्षों से ज्ञान की नई अलख जगा रहे है एवं वर्तमान में बी.एड. और एम.एड. के विद्यार्थियों को अध्यापन कार्य कराते हैं।

आपको जैनपथप्रदर्शक समिति की ओर से हार्दिक बधाई !

(पृष्ठ १ का शेष....)

अपरान्ह ३ बजे दिगम्बर जैन महासमिति पत्रिका के सम्पादक श्री महेन्द्रकुमार पाटनी की अध्यक्षता में सम्पन्न हुई बैठक में श्री अखिल बंसल को संयोजक मनोनीत कर उन्हें तदर्थ समिति गठित करने का अधिकार दिया गया। उपस्थित ३१ सदस्यों में जो ११०० रुपये प्रदान करेंगे, उन्हें संस्था का संस्थापक सदस्य बनाने की घोषणा की गई। डॉ. रमेशजी निवाई ने 'जैन पत्र सम्पादक कल्याण कोष' बनाने हेतु ५१०० रुपये प्रदान किए।

वैराग्य समाचार

१. रुड़की (उ.प्र.) निवासी श्रीमती विनोद जैन धर्मपत्नी डॉ. जे.पी. जैन की प्रथम पुण्यतिथि (दिनांक 22 मार्च, 2007) के अवसर पर जैनपथ प्रदर्शक समिति व वीतराग विज्ञान को कुल 2200/- रुपये प्राप्त हुये।

२. भीलवाड़ा (राज.) निवासी श्री ज्ञानमलजी लुहाड़िया का दिनांक 7 मार्च 07 को शान्त परिणामों से देहविलय हो गया है। आप अत्यंत धार्मिक रुचि एवं स्वाध्याय प्रेमी थे। आप चांदमलजी लुहाडिया के भ्राता थे।

दिवंगत आत्मायें शीघ्र ही मुक्ति की प्राप्ति करें ह्न यही भावना है।

पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट द्वारा संचालित

४१वाँ शिक्षण-प्रशिक्षण शिविर, देवलाली में

पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट, जयपुर द्वारा संचालित ४१वाँ वीतराग-विज्ञान आध्यात्मिक शिक्षण-प्रशिक्षण शिविर इस वर्ष मंगलवार, दिनांक ८ मई से शुक्रवार, २५ मई २००७ तक देवलाली-नासिक (महा.) में होना निश्चित हुआ है। इस शिविर में मुख्यरूप से धार्मिक अध्ययन करानेवाले बन्धुओं (अध्यापकों) एवं मुमुक्षु भाईयों को शिक्षण-प्रशिक्षण विधि से प्रशिक्षित किया जायेगा।

इस अवसर पर डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल, पण्डित रतनचन्दजी भारिल्ल, पण्डित पूनमचन्दजी छाबड़ा इन्दौर, पण्डित अभयकुमारजी शास्त्री देवलाली, ब्र. यशपालजी जैन जयपुर, पण्डित शांतिकुमारजी पाटील जयपुर आदि के प्रवचनों और कक्षाओं का लाभ प्राप्त होगा।

इनके अतिरिक्त डॉ. उत्तमचन्दजी जैन सिवनी, पण्डित राजेन्द्रकुमारजी जबलपुर, पण्डित प्रदीपकुमारजी झांझरी उज्जैन, पण्डित शैलेषभाई शाह तलोद, पण्डित अनिलकुमारजी शास्त्री भिण्ड आदि से भी सम्पर्क किया जा रहा है तथा शिक्षण-प्रशिक्षण में सहयोग देनेवाले अनेक प्रशिक्षित अध्यापक भी पधारेंगे, जिनके द्वारा बालकों, प्रौढ़ों और महिलाओं के लिये शिक्षण-कक्षाओं की व्यवस्था की जायेगी।

बालबोध-प्रशिक्षण में प्रवेश पाने के लिये बालबोध भाग - १, २, ३ की तथा प्रवेशिका-प्रशिक्षण में प्रवेश पाने के लिये वीतराग-विज्ञान भाग - १, २, ३ की प्रवेश प्रतियोगितात्मक लिखित परीक्षा दि. ७ मई, दोपहर २ बजे देवलाली में ली जावेगी, जिसमें प्रथम श्रेणी के अंक प्राप्त करना आवश्यक होगा; अत: प्रवेशार्थी उक्त पुस्तकों की पूरी तैयारी करके आवें।

ध्यान रहे, प्रवेशिका प्रशिक्षण में उन्हें ही प्रवेश दिया जायेगा, जो बालबोध प्रशिक्षण प्राप्त कर चुके हैं। आपके यहाँ से कितने भाई-बहिन शिविर में पधार रहे हैं, इसकी सूचना निम्नांकित पतों पर अवश्य भेजें; ताकि आपके आवास एवं भोजनादि की समुचित व्यवस्था की जा सके।

देवलाली का पता - पूज्य श्री कानजीस्वामी स्मारक ट्रस्ट, कहाननगर, लामरोड, देवलाली-नासिक (महा) फोन: ०२५३-२४९२२७८,२४९१०४४

जयपुर का पता - डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल, श्री टोडरमल स्मारक भवन, ए-४, बापूनगर, जयपुर (राज.) फोन : ०१४१-२७०७४५८, २७०५५८१

प्रति,

सम्पादक : **पण्डित रतनचन्द भारिल्ल** शास्त्री, न्यायतीर्थ, साहित्यरत्न, एम.ए., बी.एड.
प्रबन्ध सम्पादक : **पं.संजीवकुमार गोधा**,डबल एम.ए.जैनविद्या व धर्मदर्शन; इतिहास, नेट, एम.फिल एवं **पं. जितेन्द्र वि.राठी**, साहित्याचार्य
प्रकाशक एवं मुद्रक : **ब्र. यशपाल जैन** द्वारा जैनपथप्रदर्शक समिति के लिए जयपुर प्रिण्टर्स प्रा.लि., एम. आई. रोड, जयपुर से मुद्रित तथा त्रिमूर्ति कम्प्यूटर्स, ए-४, बापूनगर, जयपुर से प्रकाशित।

यदि न पहुँचे तो निम्न पते पर भेजें -
ए- ४ बापूनगर, जयपुर - ३०२०१५ (राज.)
फोन : (०१४१) २७०५५८१, २७०७४५८
फैक्स : (०१४१) २७०४१२७